व्यंजना द्वारा व्यक्त किया हुआ वह स्थायी भाव रस कहा जाता है —'व्यक्तः स तै विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः ।' (का० प्र० 4/28) साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ भी इस तथ्य को इस प्रकार व्यक्त करते हैं : 'रसतामेति रत्यादिः स्थायी भावः सचेतसाम्' (सा० द० 3/1) अर्थात् रति आदि स्थायी भाव ही रस स्वरूप को प्राप्त करते हैं।

आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में रस के स्वरूप की व्याख्या करते हुए लिखा है कि सत्त्वोद्रेक रस का हेतु है। यही नहीं, वह तो अखंड, स्वप्रकाशानन्द, चिन्मय, वेद्यान्तर, स्पर्शशून्य, ब्रह्मास्वाद सहोदर और लोकोत्तर चमत्कार से युक्त होता है—

सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्द-चिन्मयः ।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः ।
लोकोत्तरचमत्कारप्राणः कैश्चित्प्रमातृभिः ।
स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः ॥ (साहित्यदर्पण 3/2-3)

आचार्य विश्वनाथ का आशय यह है कि रस का आस्वादन होता है, अतः वह रस है अर्थात् रस आस्वाद रूप है—"रस्यते आस्वाद्यते इति रसः" और इस रस के आस्वादकर्ता सहृदय ही होते हैं। इसी भाव को काव्यप्रकाशकार मम्मट ने इस कारिका द्वारा व्यक्त किया है :

सवासनानां सभ्यानां रसस्यास्वादनं भवेत् ।
निर्वासनास्तु रंगान्तः काष्ठकुड्याश्म सन्निभाः ॥

उनका आशय यह है कि रस का आस्वादन सहृदय को ही संभव है। उनका "सवासनानां सभ्यानां" कथन सहृदय हृदय का ही बोधक है। रस सहृदय संवेद्य है। रस की निष्पत्ति सत्त्वगुण की अधिकता भू होती है तथा रस का आस्वाद सदा ही अनिवार्यतः आनन्दमय ही होता है। और यह आनन्द अखंड, चिन्मय तथा वेद्यान्तर स्पर्शशून्य है अखंड से यहाँ आशय यह है कि इसमें विभाव, अनुभाव, स्थायी और संचारी आदि भावों की पृथक्-पृथक् अथवा अखण्डशः अनुभूति होती है अपितु सभी की समन्वित अखंड अनुभूति होती है। यही नहीं, इस अनुभूति में परिमाण का भेद भी नहीं होता है। इस समय किसी अन्य विषय की चेतना भी नहीं होती और तीसरे यह अनुभूति चिन्मय और बुद्धिपूर्वक होती है क्योंकि रस का आविर्भाव सत्त्व की प्रधानता होने पर ही होता है। इसका आशय यह है कि इस अनुभूति में ऐन्द्रिकता नहीं होती है। यहाँ एक बात का स्पष्टीकरण और भी आवश्यक है। वह यह है कि चर्वण आस्वाद से अभिन्न होने के कारण भाव से स्पष्टतः भिन्न है। शृंगार रस का अर्थ रति का अनुभव नहीं है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार बीभत्स रस का अर्थ जुगुप्सा या करुण रस का अर्थ शोक का अनुभव नहीं है। अन्यान्य आचार्यों के साथ ही आचार्य विश्वनाथ रसों की विलक्षणता का प्रतिपादन करने के साथ करुणादि रसों की अनुभूति भी सुखकारक मानते हैं—

करुणादावपि रसे जायते यत्परं सुखम् ।
सचेतसामनुभवः प्रमाणं तत्र केवलम् ॥

Scanned with CamScanner

इसीलिये 'रसमीमांसा' में डॉ० भगवानदास ने लिखा कि "भाव, क्षोभ, संरम्भ, संवेग, आवेग, उद्वेग, आवेश, अंगरेजी में 'इमोशन' का अनुभव रस नहीं है, किन्तु उस अनुभव का स्मरण, प्रतिसंवेदन, आस्वादन, रसन, रस है।" मेरे विचार से इसीलिये संस्कृति-साहित्य में रस की व्युत्पत्ति—'रसते इति रसः, की जाती है, तदनुसार रस स्वतः स्फुरित होने वाला तत्व है।

'रस' की एक विशेषता यह है कि रस का आनन्द चमत्कार प्राण है। यद्यपि विश्वनाथ ने इस तत्व को अत्यधिक महत्व दिया है, किन्तु इतना तो अवश्य ही है कि चमत्कार का काव्यानन्द में थोड़ा-बहुत योग अवश्य रहता है, क्योंकि चित्तवृत्ति की एक विशेषता यह है कि सुन्दर वस्तु को देखकर उसमें आनन्द एवं विस्मय की समन्वित भावना उदय होती है। सम्भवतः रस की इन्हीं विशेषताओं के कारण आचार्य मम्मट ने 'काव्यप्रकाश' में रस का विवेचन करते हुए लिखा है कि रस न ज्ञाप्य है न कार्य; और ज्ञाप्य और कार्य भी हो सकता है। न साक्षात् अनुभव है न परोक्ष, न निर्विकल्पक ज्ञान है न सविकल्पक। अतएव किसी लौकिक परिभाषा में आबद्ध न हो सकने के कारण वन अनिवर्चनीय है, अलौकिक है एवं ब्रह्मानन्द सहोदर है। निर्वितर्क समाधि का नहीं, क्योंकि उसमें तो अहंकार में भी वासना का सर्वथा नाश हो जाता है परन्तु रस में ऐसा नहीं होता है।[1] 'रस से उत्पन्न होने वाला आनन्द बाह्येन्द्रिगत[2] अनुकूलसंवेदनाजन्य आनन्द से सर्वथा भिन्न प्रकार का है। वह मानस-प्रत्यक्ष कहा गया है। इसकी अलौकिकता के आधार पर ही विभावादि को रस-हेतु न कहकर उनको विभावादि जैसा विलक्षण नाम दिया गया है... उसकी कोई विशेष सीमा नहीं निर्धारित की जा सकती है, वह अनिर्वचनीय है। रस के सम्बन्ध में ब्रह्मानन्द की कल्पना का मूल स्रोत 'तैत्तिरीय उपनिषद्' है। 'रसो वै सः' कहकर इस उपनिषद् में ब्रह्म को ही आनन्द या रस रूप बताया गया है। इसके अनुसार आनन्द ही ब्रह्म है। आनन्दमय ब्रह्म ही समस्त भूतमात्र का जनक है। ही प्राणस्वरूप है, जिसे धारण करने पर सब जीवित रहते हैं और आनन्द में ही लय भी होते हैं। इसी आधार पर योगी द्वारा अनुभूत ब्रह्मानन्द से तुलना करके काव्यानन्द को ब्रह्मानन्द सहोदर कह दिया गया।"[3]

आज मनोवैज्ञानिक के समक्ष रस तत्व के सम्बन्ध में कुछ मौलिक प्रश्न हैं, जिनका समाधान नितांत आवश्यक है। किन्तु विस्तारभय से मात्र दिग्दर्शन ही यहाँ करा सकेंगे—प्रथम प्रश्न यह है कि क्या काव्यानुभूति (रस) अनिवार्यतः आनन्दमयी

Scanned with CamScanner

चेतना है ? दूसरा प्रश्न यह है कि क्या काव्यानुभूति अनिवार्यतः भावानुभूति से भिन्न है ? तीसरा प्रश्न यह है कि क्या आनन्द अलौकिक और विलक्षण है ? इस प्रकार प्रश्न प्राच्य एवं पाश्चात्य सभी आचार्यों के समक्ष रहे हैं। इस विषय पर विचार करते हुए आचार्यप्रवर डा० नगेन्द्र ने काव्यानन्द के सम्बन्ध में पाँच सिद्धान्त प्रस्तुत किये हैं —

१—काव्य का आनन्द प्रत्यक्षतः ऐन्द्रिय आनन्द है। इस मत के प्रवर्तक प्लेटो हैं और आधुनिक युग में समर्थन ड्यूबाय ने किया है। इसके अनुसार काव्य का कला से प्राप्त आनन्द ठीक वैसा ही है जैसा कि सर्कस देखने से मिलता है।

२—काव्य का आनन्द आत्मिक आनन्द का ही रूप है। आत्मा सहज सौंदर्य रूप है—सहज आनन्द रूप है। काव्य उसी का उच्छलन है, अतः वह स्वभावतः आध्यात्मिक अनुभूति है। स्वदेश-विदेश के आदर्शवादी आचार्य इसी मत को सत्य मानते हैं। हीगेल और रवीन्द्रनाथ का यही मत है। अभिनव, मम्मट और जगन्नाथ का भी यही मत है।

३—काव्यानन्द कल्पना का आनन्द है अर्थात् मूल वस्तु और उसके काव्यांकित रूप की तुलना से प्राप्त आनन्द है। यह अरस्तू से प्रेरित एडीसन का मत है। बीसवीं शती में क्रोचे ने इसी को दार्शनिक रूप में प्रस्तुत कर काव्यानन्द को सहजानुभूति का आनन्द माना है।

४—काव्य का आनन्द सभी प्रकार के लौकिक और आध्यात्मिक अनुभवों से भिन्न एक प्रकार का विलक्षण आनन्द है जो सर्वथा निरपेक्ष है। यों तो यह सिद्धांत काफी पुराना है, परन्तु उन्नीसवीं शती के अन्त और बीसवीं शती के आरम्भ में ब्रैडले, क्लाइव बेल आदि कलावादियों ने इसकी व्यवस्थित रूप में प्रतिष्ठा की है। यद्यपि यह सिद्धान्त कुछ-कुछ रहस्यवादी प्रकृति में रंगा हुआ है और रिचर्डस ने इस पर कांट तथा हीगेल आदि का अप्रत्यक्ष प्रभाव भी माना है, तथापि 'विलक्षण अनुभूति' और 'आध्यात्मिक अनुभूति' को एक मानना उचित नहीं होगा, क्योंकि यह 'विलक्षण अनुभूति' केवल लौकिक आनन्द से ही नहीं आध्यात्मिक आनन्द से भी विलक्षण है।[1]

इन मतों के औचित्य-अनौचित्य पर यहाँ विचार अपेक्षित नहीं है किन्तु भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य को आत्मिक आनन्द का प्रतिरूप माना गया है, इसीलिये उसे अनिर्वचनीय, अलौकिक, ब्रह्मानन्द सहोदर आदि विशेषण प्रदान किये गये हैं।

Scanned with CamScanner